ओ३म्

# 'मनुष्य जीवन का सर्वहितकारी उद्देश्य सत्याचरण'

**–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

मनमोहन कुमार आर्य

सत्य और असत्य दो शब्द हैं। सत्य किसी पदार्थ का वह स्वरूप होता है जो कि यथार्थ में वैसा ही हो। हम जल के स्वरूप पर विचार करते हैं। जल एक द्रव पदार्थ है। शुद्ध जल रंग रहित होता है। जल का गुण शीतलता प्रदान करना है। इसमें गर्मी का होना अग्नि तत्व के जल में प्रवेश के कारण होता है। यदि अग्नि तत्व का किंचित भी प्रवेश जल में न हो तो जल निश्चित रूप से शीतल होगा। अतः इस संक्षिप्त विचार मनन से यह ज्ञात हुआ कि जल द्रव व शीतल होता है। और विचार करें तो हमें ज्ञात होगा कि जल हमारी पिपासा को शान्त करता है। हमारे शरीर का 2/3 भाग जलीय है तथा शेष पार्थिव। शरीर में जल का अनुपात कम हो जाये तो रूग्णता आ जाती है और इससे मृत्यु तक हो जाती है। जल हमारे भिन्न–भिन्न स्वादिष्ट भोज्य पदार्थों को पकाने व बनाने में भी काम आता है। जल से हम स्नान कर अपने शरीर को शुद्ध करते हैं तथा जल से सिंचाई करके हम अन्न व खाद्यान्न का उत्पादन करते हैं। यह सब बातें सत्य हैं। इनके विपरीत बातें असत्य कहलाती है। जल के इन गुणों व उपयोगो के विरूद्ध यदि हम यह कहें कि जल द्रव नहीं होता, जल में शीतलता नहीं होती, जल से पिपासा शान्त नहीं होती आदि तो यह बातें असत्य कहीं जाती हैं। सत्य को इस प्रकार से भी समझ सकते हैं कि जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा ही जानना व मानना सत्य होता है और उसके विपरीत असत्य होता है। इसी प्रकार से हमारे जीवन में सत्य का सर्वाधिक महत्व है। मनुष्य जीवन का उद्देश्य आध्यात्मिक व भौतिक ज्ञान, जिसे परा व अपरा विद्या कहा जाता है, प्राप्त करना है। हमारे वैज्ञानिक सृष्टि में कार्यरत नियमों को खोजते हैं और फिर उन नियमों का उपयोग कर जीवन को सुख–सुविधा सम्पन्न बनाने के लिए उनका सदुपयोग व प्रयोग करते हैं। आज हमारे पास जितने भी जीवन को सुख देने वाले साधन हैं वह सब हमारे वैज्ञानिकों द्वारा सृष्टि में कार्यरत सत्य नियमों को जानकर उनसे लाभ उठाने से ही सम्भव हुए है। **इससे यह ज्ञान होता है कि मनुष्य को सत्य का पालन करना चाहिये इससे हमारा जीवन सुखी व सम्पन्न होता है।**


**'शुभ समाचार'**

**सभी स्वाध्यायशील बन्धु जानते हैं कि महर्षि दयानन्द सरस्वती के युवा शिष्य पं. गुरूदत्त विद्यार्थी जी ने अपने जीवन काल में अंग्रेजी भाषा में अनेक लघु ग्रन्थों का प्रणयन किया था जिनका ऐतिहासिक महत्व है एवं आज भी इनका अध्ययन प्रासंगिक एवं उपयोगी है। पं. गुरूदत्त विद्यार्थी जी के इन ग्रन्थों का हिन्दी अनुवाद पं. सन्तराम जी ने किया था। इन अनुदित ग्रन्थों में से कुछ ग्रन्थों में अनेक स्थानों की हिन्दी क्लिष्ट होने के कारण, पाठकों को उन स्थलों को समझने में कठिनाई का अनुभव होता था। इन सभी ग्रन्थों का पुनरावलोकन कर आर्य जगत के यशस्वी विद्वान पं. आर्यमुनि वानप्रस्थी जी ने कठिन स्थलों को सरल कर दिया है जिससे पाठको को सुविधा होगी और यह पहले अधिक उपयोगी हो जायेंगे। ग्रन्थावली के पूर्व संस्करणों का मुद्रण पुरानी परिपाटी के अनुसार होने से शब्द–संयोजन, कागज और ग्रन्थ की सुन्दरता की दृष्टि से इसमें सौन्दर्य का अभाव था। अब यह अनुवाद में संशोधन के बाद यह ग्रन्थ आधुनिक साज–सज्जा व भव्य प्रकाशन की प्रतीक्षा में है। हम दानी महानुभावों से अनुरोध करते हैं कि 400 पृष्ठों में प्रकाश्य इस गुरूदत्त ग्रन्थावली के प्रकाशनार्थ वह श्री प्रभाकर देव आर्य, प्रधान न्यासी, श्री घूड़मल प्रह्लाद कुमार आर्य न्यास, ब्यानिया पाड़ा, हिण्डोन सिटी, राजस्थान–322230, फोन संख्या 09414034072 email: aryaprabhakar@gmail.com पर सम्पर्क कर आर्थिक सहयोग प्रदान करें जिससे इस ग्रन्थ का शीघ्र प्रकाशन सम्भव हो सके। दानी बन्धु पूर्वजों की कीर्ति बढ़ाने वाले इस सारस्वत यज्ञ से अर्जित होने वाले पुण्य के भागी बनें।**

**–निवेदकः मन मोहन कुमार आर्य**


मनुष्य का यह स्वभाव देखा गया है कि वह लोभ व मोह में फंस कर कई बार सत्य से विमुख हो जाता है। यह लोभ व मोह कई प्रकार के हो सकते हैं। किसी को अपनी प्रसिद्धि का लोभ है तो किसी को धन व भौतिक पदार्थों का तथा किसी को पुत्र आदि सन्तानों का मोह है। यदि इन एषणाओं की प्राप्ति के लिए मनुष्य उचित साधनों से इनकी प्राप्ति के लिए प्रयास करता है तो इसमें कोई अनुचित बात नहीं। परन्तु जब मनुष्य इसके लिए अनुचित साधनों का उपयोग करता है तो उसे असत्य की संज्ञा दी जाती है। धन का लोभ सर्वाधिक देखा जाता है। धन कमाने में आजकल लोग सत्य व असत्य तथा उचित व अनुचित का ध्यान नहीं रखते। जैसे भी हो, धन को उपार्जित करना है। इस अनुचित कार्य के कारण मनुष्य को अनेक पाप करने पड़ जाते हैं परन्तु लोभ का प्रभाव ऐसा होता है कि वह जानकर भी अनजान बना रहता है। इसका एक कारण यह भी है कि आजकल की स्कूली शिक्षा में आध्यात्मिक मूल्यों को उचित महत्व नहीं दिया जा रहा है। हम बड़े–बड़े

शिक्षितों, ज्ञानियों व विद्वानों तक को अनुचित कार्य करते हुए देखते हैं। जब वह करते हैं तो अनुचित कार्यों को करते समय पूरी गोपनीयता बरतते हैं। किसी को पता ही नहीं चलता। परन्तु एक समय ऐसा आता है कि जब उनके कामों का पर्दाफास हो जाता है। फिर उन्हें मुंह छिपाना पड़ता है। टीवी व समाचार पत्रों में ऐसे उदाहरण समय–समय पर मिलते रहते हैं। आज के समय में व्यक्ति को झूठ बोलने में भी महारत हासिल है। ऐसे लोग कई बार न्याय की प्रक्रिया में भी फंस जाते हैं। वहां वह जानते हुए भी कि वह गलत हैं, सत्य को छिपाते हैं एवं घुमा फिराकर बातें करते हैं जिससे अभियोजन पक्ष को उनके विरूद्ध प्रमाण जुटाने में कठिनाई का अनुभव होता है। ऐसी स्थिति में कई बार प्रमाण के अभाव में गलत काम करने वाले बच भी जाते हैं। यह न्याय व्यवस्था के लिए एक चुनौती होती है कि अनुचित काम करने वाले दण्ड व्यवस्था से न बच पायें।

मनुष्य असत्य के मार्ग पर क्यों चलता है? क्या उसे असत्य के मार्ग से हटाया जा सकता है और क्या उसे सत्य के मार्ग पर चलाया जा सकता है? आईये, इस प्रश्न का उत्तर ढूंढ़ते हैं। मनुष्य असत्य के मार्ग पर मुख्यतः अज्ञान व स्वभाव दोष के कारण चलता है। जब उसे ज्ञान हो जाता है तो वह अपना हित व अहित जानते हुए, सत्य व असत्य को समझते हुए दोनों में से एक का चयन करता है। कई बार मनुष्य जानबूझ कर असत्य को स्वीकार करता है जिसका कारण उसका उसमें बड़ा स्वार्थ होता है। मनुष्य बुरे काम करता ही स्वार्थ में फंस कर है। हमें लगता है कि यदि स्वार्थ न हो तो स्वभाव दोष को छोड़कर शायद बुरे कार्यों को करने में प्रवृत्त न हो। यदि मनुष्य में स्वार्थ न हो तो शायद कोई भी मनुष्य असत्य का आचरण न करे। अज्ञानता में असत्य का आचरण होना सम्भव है परन्तु सत्य व असत्य का ज्ञान होने पर भी जो असत्य का आचरण करता है तो उसका कारण उसका अपना स्वार्थ व हित होता है जो उसे विवेकशून्य बना देता है। ऐसे लोगों को जो ज्ञानपूर्वक बुरे काम करते हैं, हमारा कानून सजा देता है जबकि अनजाने व अज्ञानता तथा परिस्थितियोंवश किये जाने वाले अपराधिक कार्यों में वह कुछ नरम होता है जो कि उचित ही है। अब मनुष्य में स्वार्थ की प्रवृत्ति तथा अपने हित को पूरा करने के लिए उचित व अनुचित का विचार न करने की प्रवृत्ति पर विचार करते हैं। अपने स्वार्थ व हित को सिद्ध करने वाला व्यक्ति उसके परिणामों से अनभिज्ञ होता है। **उसे यह निश्चयात्मक ज्ञान नहीं होता कि यदि वह सांसारिक विधि व्यवस्था से बच भी गया या उसे उसके अपराध की मात्रा के अनुसार दण्ड नहीं मिला तो ईश्वर की व्यवस्था से उसे कालान्तर में अवश्यमेव दण्ड मिलेगा।** अब समयान्तर पर उसे कड़ी सजा मिलती है। हमने कई बार लोगों को यह कहते सुना है कि एक व्यक्ति बुरा काम करता है परन्तु वह तो सुखी व सम्पन्न है, फल–फूल रहा है जबकि हम अच्छा काम करने पर भी दुखी है। इसका कारण होता है कि अभी वह परीक्षा दे रहा है, उसके पूरी होने पर ईश्वरीय व्यवस्थानुसार दण्ड मिलेगा। दूसरी ओर हमने पहले जो परीक्षा कभी दी थी जिसमें हमने कुछ या अधिक बुरे कर्म किये थे, उसका परिणाम निकल आया है जिसके कारण हमें दुख मिल रहे हैं। अनेक परिस्थितियों में हम अपने बुरे कर्मों को भूल चुके होते हैं। **ईश्वर की व्यवस्था ऐसी है कि मनुष्य जब पाप अर्थात् असत्य कार्य करता है तो वह उसके हृदय या आत्मा में प्रेरणा करता है और उसे भय, शंका व लज्जा की अनुभूति कराता है।** परन्तु जब वह नहीं मानता और बुरा काम कर डालता है तो फिर वह उसे फल का भोग करते समय ज्ञान क्यों कराये, चेतावनी तो उसने कर्म करने से पूर्व दी ही थी। वह तो सीधा अपना निर्णय सुनाता है जिस कारण असत्य व बुरे कर्म करने वाले को नाना प्रकार के दुख प्राप्त होते हैं जिनसे वह विचलित होता है और मानने को तैयार नहीं होता कि अतीत के बुरे कर्मों का फल उसे ईश्वर की व्यवस्था से मिल रहा है। इस उदाहरण को समझकर यदि हम भविष्य में या अगले जन्म में दुखों से बचना चाहते हैं और यह चाहते हैं कि हमारे भावी जन्म व जीवन में सुख व शान्ति हो, हमें अच्छी योनि में जन्म मिले और वहां हम खूब सुख भोगें, **तो हमें इस जन्म में अच्छे कर्मों की पूजीं को अपने कर्मों के खाते में जमा करना व संचित करना होगा जिसका भुगतान हमें अवश्यमेव भावी जीवन में होगा।** इसकी गारण्टी ईश्वर ने अपने ज्ञान वेद में दी है जो कि वेद का अध्ययन करने पर समझ में आती है। यदि हम सदाचार, परोपकार, सेवा, ईश्वर की उपासना व यज्ञादि कर्मों को नहीं करते हैं तो हमारा कर्मों का खाता खाली होगा या जमा पूंजी कम होगी जिससे हमारे जीवन में सुख की मात्रा भी उसी के अनुरूप होगी। इस कर्म–फल रहस्य को जानकर स्वार्थ का त्याग कर हम सभी को सत्य पर ही स्थिर रहना चाहिये। यदि नहीं रहेंगे तो ईश्वर अपने विधान के अनुसार अपना कार्य करेगा।

हमने इस लेख में यह विचार किया है कि मनुष्य क्या असत्य व बुराईयों का त्याग नहीं कर सकता? क्या असत्य का आचरण व बुराइयों को भी जीवन में प्रयोग में लाना आवश्यक है? इसका समाधान वैदिक ज्ञान व कर्म–फल व्यवस्था को जानने से होता है जिसका उल्लेख पूर्व किया गया है। इसका दूसरा उपाय है कि जो लोग ईश्वरीय विधान को जान व समझ चुके हैं, उनका यह कर्तव्य है कि वह दूसरों असत्याचरण से बचायें। माता–पिताओं को बच्चों को अच्छी शिक्षा व संस्कार देने का प्रबन्ध करना चाहिये। बच्चों को अपने विद्यालयों या गुरूकुलों में वेदों के अनुसार शिक्षा मिलनी चाहिये। वहां वह अन्य सभी विषयों के साथ ईश्वर की उपासना व अग्निहोत्र विज्ञान का नियमित रूप से अध्ययन व आचरण करें। अध्ययन में आध्यात्म विद्या का विषय आवश्यक होना चाहिये। सामाजिक नियम कड़े होने चाहिये तथा दण्ड विधान तीव्र–गतिवान, कठोर व प्रभावशाली होना चाहिये। ऐसा होने पर ही मनुष्यों को बुरे कर्मों से हटा कर अच्छे कर्म करने में प्रेरित किया जा सकता है। इससे सभी का व्यक्तिगत लाभ, अभ्युदय व निःश्रेयस होने के साथ समाज तथा देश का हित भी होगा।

**–मनमोहन कुमार आर्य**
**पताः 196 चुक्खूवाला–2**
**देहरादून–248001 / फोनः09412985121**